© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 1 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

भट्टिकाव्य में वर्णित शिल्प एवं छन्द योजना

अशोक कुमार वर्मा

शोधच्छात्र संस्कृत विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद

महाकवि भट्टि–विरचित एकमात्र महाकाव्य उन्हीं के नाम पर ''भट्टिकाव्य'' के नाम से संस्कृत–जगत में प्रसिद्ध है। इसका अपर नाम ''रावण–वध'' भी है। इसमें कुल 22 सर्ग एवं 1629 श्लोक हैं। इसका मूल स्रोत ''वाल्मीकि–रामायण'' है। इसमें विश्वामित्र के साथ राम के वनगमन से राज्याभिषेक तक की रामायण–कथा वर्णित है। भट्टिकाव्य का मुख्य लक्ष्य रामकथा का वर्णन न होकर व्याकरण के जटिल नियमों का काव्य–शैली में उदाहरण प्रस्तुत करना है। इस प्रकार यह एक ''शास्त्र काव्य'' भी है। आचार्य क्षेमेन्द्र ने अपने ''सुवृत्त–तिलक''[1] में इसे ''काव्य–शास्त्र'' की संज्ञा दी है। इसके 1. प्रकीर्ण काण्ड, 2. अधिकार काण्ड, 3. प्रसन्न काण्ड, 4. तिङन्त काण्ड नामक चार काण्ड हैं।

प्राचीन भारतीय विद्वानों द्वारा अपने जीवन–वृत्त के विषय में कुछ भी न लिखे जाने की परम्परा रही है। काव्य शिल्पियों का सहज विनय–भाव ही इसका मूल कारण रहा है, यद्यपि ऐतिहासिकता की दृष्टि से यह प्रवृत्ति एक कमी की ही द्योतक सिद्ध हुई है। इसी परम्परा का निर्वाह करते हुए ''रावण–वध'' के प्रणेता महाकवि भट्टि भी अपने जीवन–वृत्त के विषय में मौन हैं। भट्टिकाव्य द्वारा कवि के विषय में मात्र इतना ज्ञात होता है कि इसकी रचना श्रीधरसेन–शासित वलभी राज्य में हुई थीः–

''काव्यमिदं विहितं मया वलभ्यां श्रीधरसेन पालितायासु।

कीर्तिरतो भवता नृपस्य तस्य क्षेमकरं, क्षितिपो यतः प्रजानाम्।।

गुप्त–साम्राज्य के अनन्तर वलभी राज्य में सन् 500 ई0 तक धरसेन नामक चार राजाओं का उल्लेख मिलता है। प्राप्त काव्यगत तथ्यों एवं विवरणों से तथा वलभी के सेन शासकों के दानपत्रों एवं शिला लेखों[2] से यह ज्ञात होता है कि भट्टि को अन्तिम धरसेन चतुर्थ (650 ई0) के बाद नहीं रखा जा सकता। अतः भट्टि का समय छठीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध एवं सातवीं शती के मध्य माना जा सकता है।

कवि की काव्य–रचना के उद्देश्य के अनुरूप ही काव्य का कलेवर निर्मित होता है। महाकवि भट्टि का मूल उद्देश्य रामकथा–निरूपण के साथ पाठकों को व्याकरण के नियमों का ज्ञान प्रदान करना है। इस उद्देश्य के अनुरूप ही व्याकरण–प्रधान ''भट्टिकाव्य'' की भाषा का प्रवाह अवरुद्ध सा हो गया है, फिर भी कवि ने काव्य के समस्त तथ्यों का समावेश कर उसमें चारुता एवं भाव–प्रेषण का प्रयत्न किया है।

महाकवि भट्टि का शब्द–ज्ञान प्रशंसनीय है। उन्होंने अवसरानुकूल शब्द रूपों का यथोचित प्रयोग किया है। भट्टि के शब्द के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–

प्रथम सर्ग में अयोध्यापति दशरथ के कार्य एवं गुण के अनुरूप 'नरपालक' अर्थ में 'नृप' शब्द का प्रयोग 11वें एवं 12वें श्लोक में किया गया है–

"एहिष्टं तं कारयितुं वृताऽऽत्मा, क्रतुं नृपः पुत्रफलमुनीन्द्रम्

ज्ञाताऽऽशयस्तस्य ततोव्यातानीत्, स कर्मठः कर्मसुताऽनुबन्धनम्

रक्षांसि वेदीपरितो निरास्थदंगान्ययाक्षीदमितः प्रधानम्

शेषाण्यहौषीत् सुतसम्पदे च, वरं वरेण्यो नृपतेरमार्गीत।।"[3]

राम के लिए प्रसंगानुकूल अलग–अलग विशेषणों का प्रयोग किया गया है। उदाहरणार्थ – राम की सर्वव्यापकता हेतु 'राम' शब्द वीरता हेतु 'रघुव्याघ्र' रघुसिंह आदि।

"इषुमति रघुसिंहे दन्दशूकान्जिघांसौ

धनुराििभिरसहां, मुष्टिपीडं दधाने।,

व्रजति पुरतरूण्योबद्ध चित्रांगुलित्रे

कथमपि गुरूशोकान्मा रूदन्मांगलिभ्यः।।"[4]

रावण के लिए वीरता के प्रसंग में शक्रारि, शक्रजित्, सुरारि, क्रूर रूप में दशग्रीव, दशानन व राक्षसेश्वर शब्द का प्रयोग किया गया है।

हनुमान के लिए पवनसुत, वातात्मज, मारुतिनन्दन इत्यादि शब्दों का प्रसंगानुकूल प्रयोग किया गया है।

भट्टि ने कुछ ऐसे शब्दकोषीय शब्दों का प्रयोग किया है, जिसका प्रयोग विरले ही करते हैं, जैसे – समूह के लिए कदम्बक–

"विचित्रमुच्चैःप्लवमानमारात्कुतूहलं त्रस्नु, ततान तस्य।

मेघाऽत्यैथोपातवनोपशोभ कदम्बकं वातामजं मृषाणाम्।।[5]

समाप्ति के लिए 'निष्ठा' शब्द–

"निष्ठां गते दत्रिमसभ्यतोषे, विहित्रिमे कर्मणि राजपत्न्यः।

प्रार्शुहुतोच्छिष्ष्मुदारवंश्यास्तिस्त्र प्रसोतुं चतुः सुपुत्रान्।।[6]

मारने के लिए 'तृणेढु' शब्द–

"तानि द्विषद्वीर्यनिराकरिष्णुस्तृणेढु रामः सह लक्ष्मणेन।"[7]

कहीं–कहीं केवल–क्रिया–शब्दों के प्रयोग के द्वारा ही सम्पूर्ण श्लोक की रचना कर भावाभिव्यक्ति की गयी है–

"भ्रेमुर्क्वल्गुर्नतुजक्षुर्जुगः समुत्पुप्लुविरे निषेदुः।

अस्फोटयान्चक्रुरभिप्रणेदू रेजुर्ननन्दुविर्ययुः समीयुः।।[8]

यत्र–तत्र सूक्तियों का भी सफल–प्रयोग दृष्टिगत होता है–

1. **मानिनीसंसहेतन्यसंगमम्।।**[9]
2. **प्रज्ञा तु मन्त्रेऽधिकृता न शौयर्म्।**[10]
3. **रिक्तस्य पूर्णेन वृथा विनाशः।**[11]
4. **प्रज्ञास् तेजस्विनः सम्यक् पश्यन्ति व वदन्ति च।**[12]
5. **अहो जागृति वृच्छेषु देवं।**[13]
6. **न भवति महिमा विना विपत्ते।**[14]

महाकवि भट्टि ने तेरहवें सर्ग को इस रूप में लिखा है कि वह संस्कृत और प्राकृत दोनों रूपों में पढ़ा जा सके–

"तुंग–मणि–किरणं–जालं–गिरिजल संघट्ट बढगम्भीररवम्।

चारुगुह्यविवरसमं सुरपुररवममर चारण सुसंरावम्।।[15]

त्रयोदश सर्ग इस प्रकार के अनूठे रचना–कौशल की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। महाकवि भट्टि की शैली में कलात्मकता अधिक है, जो कालिदास के परवर्ती कवियों में विशेष रूप से पायी जाती है। भट्टि मूलतः वैयाकरण एवं आलंकारिक हैं, अपनी इसी मूल प्रवृत्ति को उन्होंने काव्यात्मक ढंग से रखकर अपने अनूठेपन का परिचय दिया है।

"रावण–वध" प्रणेता महाकवि भट्टि ने अपनी सोलह सौ श्लोकीय काव्य–कृति में वर्णिक और मात्रिक दोनों छन्दों का प्रयोग किया है, जिसमें मात्रिक छन्द अनुष्टुप् की संख्या आधे से अधिक सर्गों में है। भट्टि ने अपने महाकाव्य में स्कन्धक छन्द का सुन्दर प्रयोग किया है, जिस पर प्रवरसेन के "सेतुबन्ध" का प्रभाव है। कवि ने अपने महाकाव्य में कुल 22 छन्दों का प्रयोग किया है–

1. अनुष्टुप्, 2. उपजाति, 3. आर्या, 4. पुष्पिताग्रा, 5. इन्द्रवज्रा, 6. उपेन्द्रवज्रा, 7. द्रुतविलम्बित, 8. प्रमिताक्षरा, 9. तोटक, 10. वंशस्थ, 11. तनुमध्या, 12. प्रहर्षिणी, 13. मालिनी, 14. सुन्दरी, 15. औपच्छन्दसिक, 16. ललित, 17. नन्दन, 18. प्रहरणकलिका, 19. मन्द्राक्रान्ता, 20. रुचिरा, 21. स्त्रग्धरा, 22. शार्दूलविक्रीडित।

कवि ने काव्यशास्त्रीय परम्परा का निर्वाह करते हुए एक सर्ग में एक ही छन्द का प्रयोग किया है और सर्ग के अन्त में आगामी कथा को सूचित करने में उसे बदल दिया है।

"नानावृत्तमयः कथापि सर्गः कश्चनदृश्यते।

सर्गान्ते भाविसर्गस्य कथायाः सूचनं भवेत्।।[16]

उल्लेखनीय है कि कवि का प्रिय छन्द अनुष्टुप् है। इसका प्रयोग उन्होंने अपने ग्रन्थ में 1245 बार किया है। इसके अतिरिक्त उपजाति 270 बार, आर्या 50 बार तथा पुष्पिताग्रा 30 बार प्रयुक्त हुआ है।

अपने छन्द–प्रयोगकौशल को प्रदर्शित करने के लिए कवि ने 10वें सर्ग में कुल 21 प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया है, जिसमें पुष्पिताग्रा छन्द का प्रयोग बहुतायत से किया गया है।

22 सर्गीय इस महाकाव्य के 15 सर्गों में अनुष्टुप्, 5 सर्गों में उपजाति तथा एक सर्ग में आर्या छन्द का प्रयोग किया गया है। उपजाति का प्रयोग रामजन्म, सीता–विवाह एवं राम–वनगमन और विभीषण की शरणागति प्रसंग में किया गया है।

आर्या छन्द 'सेतुबन्धन' प्रसंग में प्रयुक्त है। महाकवि भट्टि ने दशम सर्ग के समान 22वें सर्ग में भी विविध छन्दों का प्रयोग किया है। प्रारम्भिक श्लोक 1–23 तक अनुष्टुप् छन्द में हैं और अन्त में क्रमशः 24, 25 उपजाति में 26, 27 प्रहर्षिणी, 28वाँ औपच्छन्दसिक, 32वाँ पुष्पिताग्रा, 33वाँ, 34वाँ पथ्यावक्त्र छन्द में है। अग्रिम 35वें श्लोक में चितचमत्कृति है।[17]

इस प्रकार महाकवि भट्टि की शिल्प एवं छन्द योजना काव्य–शास्त्र की परम्परा के अनुकूल है। अन्त में हम महाकवि भट्टि के ही शब्दों में कह सकते हैं कि जो विद्वान व्याकरण के ज्ञाता हैं, उनके लिए यह ग्रन्थ दीपक की भांति है, किन्तु व्याकरण से रहित लोगों के लिए अन्धे के हाथ में दिए गए दर्पण के समान है–

"दीपतुल्यः प्रबन्धोऽयं शब्दलक्षणचक्षुषाम्।

हस्तादर्श इवाऽन्धानां भवेद्व्याकरणादृते।।"

सन्दर्भ–ग्रन्थ–सूची

1. क्षेमेन्द्रकृत – सुवृत्ततिलक 2/2, 3, 4,
2. इण्डियन एण्टिक्वेरी जिल्द 1, पृष्ठ – 84–92, जिल्द 15, पृष्ठ – 15 व 335
3. भट्टिकाव्य – 1/11,12
4. वही – 1/26
5. वही – 2/27
6. वही – 1/13
7. वही – 1/19
8. वही – 13/28
9. वही – 2/6
10. वही – 12/22
11. वही – 12/46
12. वही – 18/6
13. वही – 18/11
14. वही – 10/63
15. वही – 13/36
16. विश्वनाथ, साहित्यदर्पण
17. सत्यपाल नारंग, भट्टिकाव्य : एक अध्ययन, छन्द विवेचन (1969) पृष्ठ 84